भूमिका

श्रावक आराधना की रचना जयपुर के श्रावक श्री गुलाबचंद जी लूनिया ने वि.सं. 1972 में की थी। यह रचना आचार्य जयाचार्य कृत 'आराधना' से प्रेरणा प्राप्त कर लिखी गई थी। जैन परम्परा में अध्यात्म साधना की यह सर्वोच्च उपलब्धि कही जा सकती है। श्रावक आराधना मृत्यु से मृत्युंजयी बनने की कला की प्रक्रिया में प्रशिक्षण देने वाला ग्रन्थ है।

श्री गुलाबचंद जी लूनिया कृत 'श्रावक आराधना' ढूंढाड़ी और मारवाड़ी में है। इसको हिन्दी भाषान्तर के साथ श्री पुखराज और श्रीमती रत्ना लूनिया ने प्रकाशित कराया है। लूनिया दम्पती एक ओर जहाँ प्रगतिशील विचार वाले व्यक्ति हैं, वहीं अध्यात्म व लोकहित के साहित्य का सृजन और प्रकाशन कराते आ रहे हैं। 'श्रावक आराधना' का प्रकाशन इसी सामाजिक सेवा की एक कड़ी है। वे प्रशंसा के पात्र हैं।

जैन धर्म कर्मवाद में विश्वास रखता है। जीवन और मरण के क्रम में उसका विश्वास है। जैन धर्म मानता है कि शरीर और आत्मा दो भिन्न वस्तुएं हैं। जैन धर्म के कर्मवाद को कविवर तुलसीदास ने इस प्रकार अभिव्यक्ति दी है:-

''करम प्रधान विस्व रचि राखा,
जो जस करई सो तस फल चाखा।।''

अध्यात्म दर्शन के आचार्यों का एक मत से यह महास्वर मुखरित हुआ है - ''अहं करोमीति वृथाऽभिमानः।''

आत्मा पर जो कर्म तथा कषायों के बंधन हैं, इन बंधनों को काटकर ही जीवन-मरण समाप्त किया जाकर परमात्म-तत्त्व प्राप्त करना ही मानव का उद्देश्य है। आत्मा स्वयं परमात्मा है। वह जैन दर्शन के अनुसार ईश्वर-परमात्म-तत्त्व है, यह सब सम्भव है आराधना के द्वारा। अर्थात्–पूजा और उपासना के द्वारा। आत्मनिरीक्षण, आलोचना तथा गुणानुवाद के साथ इष्ट की उपासना के द्वारा।

आत्मा को निर्मल व वीतराग बनाने की पद्धति आराधना है। इसी उद्देश्य से संवत् 1935 में श्रीमद्जयाचार्य ने 'आराधना' की रचना की। 'भगवती आराधना' की छाप भी जयाचार्य कृत आराधना में स्पष्ट दिखाई देती है। जहाँ जयाचार्य की आराधना साधु जीवन को ध्यान में रखकर रची गई थी, 'श्रावक आराधना' श्रावक जीवन के लिए है। यह आराधना एक अनुष्ठान

है। जहाँ व्यक्ति अपना आत्म-निरीक्षण करता है, अपने कर्मों का विश्लेषण करता है और उसके हेतु प्रायश्चित करता है। और, इन सबका यह परिणाम होता है कि उसे चित्त की निर्मलता प्राप्त होती है।

'श्रावक आराधना' एक भक्ति-काव्य है। यह निर्विवाद सत्य है कि अनुवाद या भाषान्तर कभी भी मूल कृति से श्रेष्ठ नहीं हो सकता; किन्तु हिन्दी भाषान्तरकार ने कृति को अधिक ग्राह्य व उपयोगी बनाने का बहुत अच्छा प्रयत्न किया है। भाषा सौष्ठव व शब्द चयन बहुत अच्छा है, छंदों में गति विद्यमान है, सुष्ठु प्रवाह है।

'भगवती आराधना' की तर्ज पर 'श्रावक आराधना' का प्रारम्भ भी अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधुओं को नमन कर किया गया है। अन्तर केवल इतना है कि अरिहन्त और सिद्ध तो आराधना का फल प्राप्त कर चुके हैं, अतः आचार्य, उपाध्याय और साधु, इन तीनों साधकों के अनुग्रह के लिए भगवती आराधना ग्रन्थ रचा गया था। श्री लूनिया जी ने श्रावक आराधना में कर्मवाद पर प्रकाश डाला है और स्पष्ट शब्दों में कहा है कि यदि कर्मयोगवश कोई त्रुटि हो जाये तो गुरु के समक्ष उसका प्रायश्चित कर दण्ड स्वीकार करें। यदि हम सम्यक्त्व रत्न प्राप्त कर लेते हैं तो उसे सुरक्षित रखकर सुख प्राप्त कर सकते हैं।

कर्मवाद मनुष्य की तमाम कुण्ठाओं को विसर्जित करता है। कवि ने प्रथम द्वार में ही नीति स्पष्ट कर दी कि आलोचना कर्तव्य है। मोह कर्म को नित्य क्षीण करते रहने पर इसमें जोर दिया गया है। अपरिग्रह को सात्विक रूप से समझाया गया है। भूमि, भवन, सोना, धन आदि संग्रह करने के संबंध में स्पष्ट रूप से चेतावनी दी गई है कि मर्यादा का उल्लंघन न करें।

अधर्म क्या है, इस पर भी प्रकाश डाला गया है। आराधनामय जीवन सच्चा जीवन है और आराधनापूर्ण मरण ही यथार्थ मरण है। दर्शन की आराधना करने पर ज्ञान की आराधना नियम से होती है, किन्तु; ज्ञान की आराधना करने से दर्शन की आराधना पूजनीय है। संयम की आराधना करने पर तप की आराधना नियम से होती है। कवि ने भी यह स्पष्ट किया है कि जिस कर्म का फल नहीं भोगा गया है, उसका विनाश नहीं होगा। कर्म अपना फल देकर ही जाता है। जैन मत में सदाचार के बिना धर्म प्राणरहित है।

आराधना के संबंध में एक शंका श्रावक के मस्तिष्क में रहती है कि थोड़े से समय की उम्र में मोक्ष कैसे प्राप्त किया जा सकता है? किन्तु, आराधना का कवि कहता है कि यह आशंका निर्मूल है, क्योंकि आराधना काल का निश्चित परिमाण नहीं है। बहुत से मुनि मुहूर्त मात्र में आराधना करते हुये मुक्ति प्राप्त कर चुके हैं। आराधना का दर्शन अपने दोषों की सम्यक् रूप से आलोचना करना है।

जैन धर्म व्यक्ति को आध्यात्मिकता की ओर ले जाता है, निवृत्ति की ओर आकर्षित करता है। 'श्रावक आराधना' इसको साकारता प्रदान करती है। श्रावक आराधना के यशस्वी रचनाकार श्री **गुलाबचन्द जी लूनिया** ने समाज को यह निधि प्रदान कर जैन समाज पर बहुत बड़ा उपकार किया है। श्रावक इसे आराधना मानकर इसका अनुसरण करे तो वह अपना जीवन सार्थक बना सकता है। यह सच है कि आचार की भिन्नता है, विचारों की भीड़ है, पंथों की अधिकता है और सर्वमान्य कोई निश्चित मार्ग नहीं है। ऐसी स्थिति में 'श्रावक आराधना' उसे यह पहचान देने का प्रयत्न करती है कि ''तू मानव है, स्वयं का सृष्टा है, अपना भाग्य विधाता है, तू नर चोले में नारायण है।''

सजग आराधना नित्य करो, जीवन में उत्साह भरो और कर्म के कीचड़ को धो डालो, व्रत की पालना करो, यही 'श्रावक आराधना' का सार है :-

सजग आराधना करे नित, भव्य जीव उत्साह से।
धोएं निरन्तर कर्म-कीचड़, पालते व्रत भाव से।।

जस्टिस पानाचन्द जैन

23 मौजी कॉलोनी,
मालवीय नगर, जयपुर